प्रेम का द्विपक्षीय लोकतंत्र

अभय कुमार दुबे

निदेशक, भारतीय भाषा कार्यक्रम, विकासशील समाज अध्ययन पीठ (सीएसडीएस), दिल्ली

> प्रेम कोई ऐसी शै नहीं है जिसके चक्कर में फँस कर व्यक्ति बुद्धि और जीवट के रास्ते से हटते हुए एक तरह की बेलौस समझ का शिकार होता चला जाए। बल्कि प्रेम तो एक ऐसा संकल्प है जिसके तहत व्यक्ति किसी दूसरे के साथ सहअस्तित्व में रहने के जीवंत अनुभव से गुज़रता है; और उस रिश्ते को सफल करने के लिए आदर, तार्किकता और विचार का सहारा लेता है।
>
> **— ल्यूस इरिगरे / 'डेमॉक्रैसी बिगिंस बिटवीन टू'**

सुधीर कक्कड़ ने एंद्रिक प्रेम के सबसे बड़े सिद्धांतकार आचार्य वात्स्यायन मल्लनाग की औपन्यासिक जीवनी का उद्घाटन एक ऐसे विवरण से किया है जिसमें वासना और उदात्त प्रेम की श्रेणियाँ एक-दूसरे को चुनौती देते हुए आपस में गुँथी हुई नज़र आती हैं। 'कामयोगी' (एसेटिक ऑव डिज़ायर) की कथा का युवक सूत्रधार नदी के घाट पर विचरण कर रही गणिकाओं की सुंदर देहयष्टि देख कर अपनी उत्तेजना नियंत्रित कर पाने में विफल है। उसे अफसोस होता है कि इतने वर्ष तक वेदों का अध्ययन करने के बावजूद वह आवश्यक आत्मनियंत्रण से वंचित है। धोती के भीतर बार-बार विद्रोह में सिर उठाने वाले शिश्न से परेशान वेदों का वह ज्ञाता ऊहापोह में फँस कर सोचता है कि उसकी कामना का चरित्र क्या है? क्या उसकी कामना उदात्त है या फिर उसके ऊपर वासना की इबारत लिखी हुई है? उसकी यह हालत देख कर दूसरे लोग क्या सोच रहे होंगे? इन प्रश्नों का उत्तर खोजते हुए वह एक ऐसी दुविधा का साक्षात्कार करता है जो शाश्वत और विराट है : मनुष्य को अपनी कामना उदात्त और दूसरे की कामना वासनामय क्यों नज़र आती है?

जैसा कि हमें पता है कि 'कामसूत्र' के रचियता वात्स्यायन मल्लनाग लगभग ढाई हज़ार साल पहले हुए थे। उस युग में प्रेम का विचार आज की तरह तरह-तरह के खानों में बँटा हुआ नहीं था। प्रेम, राग, शृंगारिकता और एंद्रिकता की अर्थछायाएँ मुख्यत: पर्यायवाची थीं। प्रेम का मतलब था सेक्शुअलिटी पर ग़ौर करना और सेक्शुअलिटी का अर्थ था प्रेम के व्यावहारिक पक्षों का भाष्य करना। वात्स्यायन की किताब में आत्मसंयम या आत्मनियंत्रण का तात्पर्य प्रेम-क्रीड़ा की व्यावहारिक सफलता या विफलता के संदर्भ में निकल कर आता है। वह किसी भी अर्थ में डि-सेक्शुअलाइज़ हो कर आध्यात्मिक या तथाकथित रूप से सात्त्विकता के मुकाम की तरफ नहीं जाता। 'कामसूत्र' के सैद्धांतिक आधार में अगर कोई बहस थी तो उसे पुरुष और स्त्री की सेक्शुअलिटी के बीच के विवाद के रूप में देखा जा सकता है। यही कारण है कि वात्स्यायन प्रेम के शास्त्र में अपना मौलिक योगदान स्त्री की सेक्शुअलिटी के स्वायत्त और स्वतंत्र चरित्र के सूत्रीकरण के रूप में रेखांकित करते हैं। लेकिन सुधीर कक्कड़ ढाई हज़ार साल पहले के नहीं बल्कि आज के विमर्शकार हैं। उनका सूत्रधार वात्स्यायन के युग में स्थित तो है, पर असल में उसकी बौद्धिकता प्रेम की आधुनिक दृष्टि से चालित प्रतीत होती

है। उसकी उलझनें हमारे-आपके युग की उलझनें लगती हैं। वेदों का वह जानकार युवक उपन्यास में आगे चल कर वात्स्यायन का शिष्य बनता है और गुरु-पत्नी के प्रति प्रेम और कामना के दुविधाजनक खेल में उलझ कर तकरीबन उसी तरह के मानसिक संतापों से गुज़रता है जो स्त्री-पुरुष रिश्तों के संदर्भ में आज के मनुष्य को अक्सर सताते रहते हैं। 'कामयोगी' इस दृष्टि एक महत्त्वपूर्ण रचना है कि उसमें कामना के प्राचीन विमर्श के बहाने आधुनिक युग की उलझनों पर रोशनी डाली गई है।

प्रेम की तथाकथित पवित्रता और वासनात्मकता पर विचार करने से पहले इस सिलसिले में हो रहे हालिया बौद्धिक प्रयासों पर एक नज़र डालना उचित होगा। नब्बे के दशक से पहले समाज-विज्ञान और मानविकी में लव-स्टडीज़ का कोई खास वजूद नहीं था। समाजशास्त्री विवाह की संस्था पर तरह-तरह से विचार करते थे। दार्शनिकों के बीच ईश्वर से प्रेम, मनुष्य मात्र से प्रेम, प्रेम और मैत्री, मातृ-प्रेम, भाई-बहिन के प्रेम जैसे विषयों पर गहन चर्चाएँ होती रहती थीं। प्रेम पर विचार करने की प्रक्रिया कुछ थी ही ऐसी कि उसके तहत प्रेम के विचार को प्रतिबद्धता, आदर, विश्वास, देखभाल और मैत्री जैसे भावानुवादों से गुज़रना ही पड़ता था। लेकिन अब यह स्थिति तेज़ी से बदल रही है। प्रेम के विचार पर एक नया विमर्श विकसित होने लगा है जो बिना किसी भावात्मक बैसाखी के इस अवधारणा की जाँच-पड़ताल करने में दिलचस्पी रखता है। लव-स्टडीज़ की दुनिया बहु-अनुशासनीय है। उसमें समाजशास्त्री, इतिहासकार, दार्शनिक, मनोविद और धर्मशास्त्री तो शामिल हैं ही, स्नायु-वैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों और प्रबंधन की दुनिया के सिद्धांतकारों ने भी इसमें अपना योगदान किया है। नारीवादी सिद्धांतकारों और जेंडर स्टडीज़ के विद्वानों और विदुषियों ने भी लव-स्टडीज़ को विकसित करने में प्रमुख भूमिका निभाई है। पिछले पंद्रह साल में ग्लोबल पैमाने पर इस तरह के विमर्शकारों के नेटवर्क बन गए हैं। कई अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुए हैं जिन्होंने प्रेम और सामाजिक-आर्थिक राजनीति की शक्ल-सूरत उकेरने की कोशिश की है। २००६ में फ्रांचेस्का ओरसिनी द्वारा सम्पादित पुस्तक 'लव इन साउथ एशिया' के प्रकाशन ने लव-स्टडीज़ के भारतीय अध्याय का उद्घाटन किया है।

उन्नीसवीं सदी का पवित्र प्रेम बनाम बीसवीं सदी का सेक्शुअल प्रेम

आज के ज़माने में रोमानी प्रेम और सेक्शुअलिटी जिस तरह से एकाकार लगते हैं, वैसी प्रतीति उन्नीसवीं सदी में संभव नहीं थी। हालाँकि आधुनिकता ने अन्य क्षेत्रों में व्यक्ति की सत्ता का आग़ाज़ अट्ठारहवीं सदी में ही कर दिया था, पर अंतरंग संबंधों के धरातल पर आधुनिकता का पदार्पण थोड़ी देर से ही हुआ। उन्नीसवीं सदी सेक्स से डरने वाली सदी थी। उसके लिए सेक्स एक ऐसी एंद्रिकता का पर्याय था जिसके कारण वैवाहिक संबंधों में निहित आध्यात्मिकता नष्ट हो सकती थी। विवाह के आध्यात्मिक सारतत्त्व को बचाने के ही लिए इस सदी में प्रेम का विमर्श कुछ इस तरह से चलाया गया कि प्रेम और सेक्श एक-दूसरे से अलग-अलग हो गए। प्रेम को पूरी तरह से सेक्सविहीन करने की कोशिश की गई। नतीजा यह निकला कि सेक्स का एक्ट एक तरह की यांत्रिकता का शिकार हो गया जिसके गर्भ से पोर्नोग्राफी ने जन्म लिया। यह विक्टोरियायी नैतिकता के पैरोकारों की कारिस्तानी थी जिसे अंग्रेज़ अपने साथ भारत लाए और जिसके चश्मे से देखने पर उन्हें भारतवासी यौनस्वच्छंदता की गिरफ्त में फँसे हुए लगे। इस विक्टोरियायी नैतिकता का गहरा असर भारतीय मानस पर पड़ा। इसीलिए प्रेम की पवित्रता का विचार आज तक हमारी नैतिकता पर हावी है। यहाँ तक कि स्त्री और पुरुष के फ्री-यूनियन में विश्वास करने वाले फ्रेड्रिक एंगेल्स के अनुयायियों का मार्क्सवाद प्रेम और सेक्शुअलिटी पर विचार करने से आज तक कतरा रहा है। हिंदी के मार्क्सवादियों का परिप्रेक्ष्य मोटे तौर पर वही है जो विक्टोरियायी नैतिकता के सिद्धांतकारों का था। वे वैवाहिक प्रेम को ही प्रेम का कारगर और स्थायी रूप मानते

हैं। इसका उदाहरण रामविलास शर्मा, जो अन्यथा कुशाग्र थे, के विमर्श में यत्र-तत्र देखा जा सकता है। हालाँकि रामविलासजी जीवन के आखिरी दिनों में प्रेम विवाह को उचित मानने लगे थे, लेकिन अंततः उनके लिए प्रेम का आदर्श रूप डि-सेक्शुअलाइज़ ही था। संभवतः इसीलिए उन्होंने सारे जीवन रीतिकालीन कविता के खिलाफ संग्राम किया। वे कौटिल्य के अर्थशास्त्र, भरत के नाट्यशास्त्र, पाणिनि की अष्टाध्यायी, कालिदास और भवभूति के काव्य का हिंदी पाठकों से परिचय कराने कराने के लिए तैयार थे, पर हज़ारी प्रसाद द्विवेदी को उन्होंने इसलिए आड़े हाथों लिया क्योंकि उन्होंने कामसूत्र की परम्परा का भाष्य किया था।

बहरहाल, उन्नीसवीं सदी में व्याप्त सेक्स और प्रेम का शत्रुतापूर्ण संबंध बीसवीं सदी में आधुनिकता के विकसित होते हुए दबावों को नहीं झेल पाया। नई सदी ने सेक्सविहीन प्रेम पर टिकी हुई और केवल प्रजनन के उद्देश्य से यौनक्रिया करने की वकालत करने वाली विवाह की संस्था को सेक्शुअल मैरिज में बदल दिया। स्त्री-पुरुष के बीच रिश्ते की दीर्घकालीन सफलता के लिए ज़रूरी समझा जाने लगा कि वे एक-दूसरे में यौनाकर्षण महसूस करें। आनंद देने और प्राप्त करने की प्रक्रिया प्रेम की परिभाषा का अंग बन गई। यौन संतुष्टि को एक सफल विवाह की आवश्यक शर्त का दर्जा मिला। विमर्श में हुए इस परिवर्तन ने रोमानी प्रेम की अवधारणा को आधुनिक मनुष्य के जीवन में सर्वोच्चता प्रदान कर दी।

नारीवाद की दार्शनिक आवाज़

जिस समय बीसवीं सदी में रोमानी प्रेम का डंका अपने चरम पर बज रहा था, नारीवाद ने अपने आलोचनात्मक प्रहार से उसके ऊपर सवालिया निशान लगाने की शुरुआत की। सत्तर और अस्सी के दशक के रैडिकल नारीवादियों ने प्रेम की आधुनिक अवधारणा को जम कर प्रश्नांकित किया। टाइ-ग्रेस एत्किंसन ने प्रेम उत्पीड़क (पुरुष) के प्रति उत्पीड़ित (स्त्री) की अनुक्रिया करार दे कर सभी को चौंका दिया। एत्किंसन और सुलेमिथ फायरस्टोन ने दावा किया कि प्रेम के विचार का इस्तेमाल स्त्री के उत्पीड़न के लिए होता रहा है। उन्होंने प्रेम के इतिहास को उस ईसाई अवधारणा में चिह्नित किया जिसमें माना जाता था कि प्रेम का सम्पूर्ण उदाहरण तो वही हो सकता है जिसके तहत किसी के प्रेम में खुद को पूरी तरह से कुर्बान कर देने की हद तक जाया जा सकता है। प्रेम के इसी ईसाई तात्पर्य के कारण रोमांटिक लव में कष्ट भोग कर प्रेम की सम्पूर्णता उपलब्ध करने का आग्रह उभरा था। सच्चा प्रेम संभव ही नहीं माना जाता जब तक उसमें कष्टभोगी होने का घटक शामिल न हो। एत्किंसन ने प्रेम के बजाय मैत्री को प्रमुखता दी और कहा कि प्रेम एकतरफा हो सकता है लेकिन मित्रता में दोनों पक्ष सक्रिय होते हैं, अन्योन्यक्रिया करते हैं और उसके प्रति दोनों को ही उत्तरदायित्व महसूस होता है।

दिलचस्प बात यह है कि रैडिकल नारीवादियों द्वारा प्रेम के बजाय मैत्री पर बल देने का विचार कोई नई बात नहीं थी। बीसवीं सदी से बहुत पहले दर्शन के क्षेत्र में इमानुएल कांट नीतिशास्त्र और राजनीति के संदर्भ में यह बात बहुत पहले कह चुके थे। विमर्श के क्षेत्र में रैडिकल नारीवाद की आभा जैसे ही मंद पड़ी, फ्रांसीसी नारीवाद की प्रमुख हस्ताक्षर और दार्शनिक ल्यूस इरिगरे के हस्तक्षेप ने प्रेम और नारीवाद के वैचारिक संबंधों को तकरीबन पूरी तरह से बदल डाला। कांट ने प्रेम को एक कर्त्तव्य के रूप में पेश किया था। इस मामले में वे देकार्त द्वारा प्रवर्तित नीतिशास्त्र के अनुयायी थे। देकार्त की किताब में प्रेम के कुछ रूप ही नैतिक रूप से स्वीकारोग्य थे। मसलन, माता-पिता और उनकी संतान का प्रेम देकार्त की निगाह में शुद्धतम था। कुल मिला कर देकार्त और कांट की मान्यता थी कि एंद्रिक प्रेम तो नैतिक हो ही नहीं सकता, क्योंकि उसमें स्वाभाविक रूप से स्थायित्व का अभाव होता है।

देकार्त के साथ-साथ स्पिनोज़ा, हिगेल, फ्रॉयड और लेविनास द्वारा स्थापित पश्चिमी दर्शन की इस स्थापित नीतिशास्त्रीय परम्परा के मुकाबले इरिगरे ने प्रेम को एक मनोभाव की तरह व्याख्यायित किया। कांट ने प्रेम को परोपकार और दूसरे के प्रति सरोकार की सीमाओं में बाँध दिया था, पर इरिगरे ने उसे दोनों सिरों पर खुला रखने का आग्रह किया। कांट ने रोमानी प्रेम का तिरस्कार करके एक तरह के डि-सेक्शुअलाइज़ लव की रूपरेखा तैयार की थी, लेकिन इरिगरे ने प्रेम और श्रांगारिकता या एंद्रिकता को एक-दूसरे से अलग करने से इनकार कर दिया। उन्होंने कहा कि सच्चा प्रेम परवान चढ़ ही नहीं सकता अगर उसके साथ एंद्रिकता न जुड़ी हो। इरिगरे के प्रेम-विमर्श की एक और खास बात थी कि उन्होंने स्व-प्रेम की धारणा को रेखांकित किया, जबकि कांट प्रेम के इस रूप को मानवीय अस्तित्व के लिए अनावश्यक मानते थे। अपनी विख्यात रचना 'शुद्ध बुद्धि की समीक्षा' में कांट ने यहाँ तक कहा कि स्व-प्रेम तो सीधे-सीधे नैतिकता का विरोधी होता है। इसके उलट इरिगरे स्व-प्रेम के अभाव को एक नैतिक समस्या के तौर पर देखती हैं। उन्होंने स्पष्ट किया कि स्त्री अगर खुद को प्रेम नहीं कर सकती तो वह पुरुष के प्रति कामना या प्रेम का एहसास भी नहीं कर पाएगी। वे फ्रॉयड की इस हिदायत का भी खंडन करती हैं कि स्त्री अगर पुरुष से प्रेम करना चाहती है तो उसे खुद से प्रेम को तिलांजलि देनी होगी। फ्रॉयड के कथन का एक मतलब यह भी निकलता है कि स्त्री पुरुष से प्रेम करके उस अभाव की भरपायी कर सकती है जो उसे स्व-प्रेम छोड़ देने से सताएगा। इसके जवाब में इरिगरे कहती हैं कि स्त्री को प्रेम करने के लिए पुरुष की वापसी का इंतज़ार करने की ज़रूरत नहीं होनी चाहिए। चूँकि वह स्वायत्त और स्वतंत्र कर्त्ता है इसलिए उसकी इयत्ता या उसका आत्म उससे अलग भी है और उसमें समाहित भी। वे बच्चे से इसलिए प्रेम करती है क्योंकि वह खुद भी कभी बचपन के दौर से गुज़री है। बच्चे को प्रेम करने के लिए उसे स्व-प्रेम को तिलांजलि देने की आवश्यकता नहीं है।

प्रेम की व्याख्या के इसी मुकाम पर इरिगरे तर्क देती हैं कि स्व-प्रेम ही प्रेम की द्विपक्षीयता की कुंजी है। लेकिन इस द्विपक्षीयता को एक-दूसरे में खो कर इकाई बनने के आग्रह की वे सिफारिश नहीं करतीं। दोनों पक्षों को एक-दूसरे से प्रेम करते हुए अपने स्वतंत्र अस्तित्व को कायम रखना ही होगा। इरिगरे के मुताबिक दो लोग प्रेम के प्रभाव में एक-दूसरे की तरफ खिंचते हैं, लेकिन उसी समय परस्पर फासला भी कायम रखते हैं। इसीलिए 'आई लव यू' उचित सम्बोधन नहीं है, बल्कि प्रेम की सही अभिव्यक्ति है 'आई लव टु यू'। प्रेम करने वालों को पता होना चाहिए कि अलग कैसे हुआ जाता है और फिर साथ-साथ कैसे आया जाता है।

समाज के धरातल पर प्रेम के प्रकार : समाज-वैज्ञानिक विमर्श

ऐसा प्रतीत होता है कि प्रेम संबंधी दार्शनिक विमर्श के इरिगरे-अध्याय ने समाज-वैज्ञानिक विमर्श को भी गहराई से प्रभावित किया है। लव-स्टडीज़ के दायरों में भी यही मान्यता है कि प्रेम मानवीय जीवन का एक आधारभूत मनोभाव है। लेकिन प्रेम के विषय में विस्तृत और गहन विचार-विमर्श करने के बाद समाज-वैज्ञानिकों ने यह नतीजा भी निकाला है कि इसकी कोई एक सार्वभौम परिभाषा देना मुश्किल है। एक से अधिक संस्कृतियों में निजी धरातल पर प्रेम की अनुभूति कमोबेश एक सी हो सकती है, लेकिन सामाजिक संरचना पर उसके प्रभाव का सवाल उठते ही अनुभूति और व्यवहार का समीकरण बहुत पेचीदा हो जाता है। विभिन्न समाजों के विकास की गति अलग-अलग होने के कारण उनमें प्रचलित प्रेम के प्रमुख और गौड़ रूप एक से नहीं होते। उपन्यासकार, कवि, नाटककार और संगीतकार प्रेम की सार्वभौम महिमा गाते हैं। उनकी दृष्टि प्रेम के रोमानी, सेक्शुअल, आत्मनिष्ठ और तर्कातीत पहलुओं पर अधिक होती है। लेकिन सामाजिक दृष्टि से देखने पर प्रेम

अपनी आत्मनिष्ठता के बावजूद वस्तुनिष्ठ संरचनाओं से अप्रभावित नहीं होता। समाज में प्रेम संबंधी निर्णय उत्पादन संबंधों, सत्ता संबंधों, जातिगत और वर्गगत संरचनाओं, अर्थव्यवस्था और बाज़ार के विकास के स्तरों और लैंगिक संबंधों की स्थिति के आधार पर लिए जाते हैं। रचनात्मक साहित्य में प्रेम की विद्रोही प्रकृति के दृष्टांतों की काफी चर्चा मिलती है, लेकिन अध्येताओं ने यह भी पता लगाया है कि प्रेम सामाजिक समझौते और परम्परानिष्ठता की प्रवृत्तियों को पुष्ट करने की भूमिका भी निभाता है। हालाँकि प्रेम के विद्वत्तापूर्ण अध्ययनों पर पश्चिमी परिप्रेक्ष्य ही छाया हुआ है, लेकिन इससे संबंधित सिद्धांतीकरण के आईने में अन्य संस्कृतियों में प्रेम से जुड़ी व्यवहार-शैलियों और संहिताओं को समझा जा सकता है।

प्रेम का आधुनिक विमर्श उसकी किस्मों का वर्गीकरण करके उसे वस्तुगत रूप से समझने की कोशिश करता है। वर्गीकरण का एक तरीका प्रेम को छः श्रेणियों में बाँटता है जिनका नामकरण प्राचीन यूनानी दर्शन से लिए गए पदों के आधार पर किया गया है। पहली श्रेणी है **इरोज़** की जो काम का यूनानी देवता है। जाहिर है कि इरोज़ के नाम से जो प्रेम है उसमें **दैहिकता की प्रधानता** है इसलिए इसे एंद्रिक प्रेम कहा जा सकता है। इसके तहत प्रेमी या प्रेमिका की शारीरिक छवि और उपस्थिति निर्णायक बन जाती है। पहली नज़र में बिना किसा तार्किक आधार पर हो जाने वाला यह प्रेम बड़ी आह्लादकारी अनुभूति देता है। लेकिन इस किस्म का प्रेम जितनी तेज़ी से होता है, उतनी ही तेज़ी से इसका अवसान भी हो सकता है। खत्म हो जाने पर प्रेम करने वाले अक्सर चकित हो सोचते हैं कि आखिर उन्होंने अपने प्रेमी/प्रेमिका में क्या देखा था? प्रेम का दूसरा रूप **मैनिया** के नाम से जाना जाता है। इरोज़ अगर प्रेम की प्रसन्न अवस्था है तो मैनिया उसका अशुभ पक्ष है। इसे हम **उन्मादी प्रेम** कह सकते हैं जिसके तहत व्यक्ति अपने प्रेमी/प्रेमिका के पीछे दीवाना हो कर पड़ जाता है। उत्कट ईर्ष्या की प्रधानता प्रेमी या प्रेमिका पर पूरी तरह से कब्ज़ा करने की इच्छा रखने वाला यह प्रेम हिंसक भी हो सकता है। एकतरफा होने पर इसके दुष्परिणाम घोर अपराधी कृत्यों में भी निकल सकते हैं। इरोज़ और मैनिया के विपरीत तीसरी किस्म **स्टोर्ज** की है जिसका विकास शांतिपूर्ण तरीके से क्रमशः लंबे समय में होता है। **स्नेहपूर्ण प्रेम** की यह श्रेणी कुछ ऐसी है जिसमें प्रेम-संबंध खत्म होने के बावजूद दोनों पक्षों में मैत्री बनी रहती है। इस प्रकार के प्रेम का उद्देश्य होता है परस्पर संतोषजनक दीर्घकालीन रिश्तों की उपलब्धि, भले ही इसमें एंद्रिक सघनता का अभाव हो। प्रेम की दो अन्य श्रेणियाँ हैं **एगैप** यानी **परोपकार-प्रधान प्रेम** और **प्रैग्मा** यानी **व्यावहारिक और परिणामवादी प्रेम**। परोपकारी प्रेम बदले में कुछ नहीं चाहता और प्रेमी को ज़्यादा से ज़्यादा देना चाहता है। परिणामवादी प्रेम अपने साथी की खूबी या सामाजिक-आर्थिक उपलब्धि पर फिदा हो जाता है। अगर किसी के व्यक्तित्व में सुरक्षा देने, माता-पिता बनने या सेवा करने की भावना अधिक झलकती है तो इसलिए उसे पसंद किया जा सकता है। अमीरी, कुलीनता या ऊँचे पद पर होना भी इन खूबियों में आता है। इस वर्गीकरण में **प्रेम की एक निहायत क्षणभंगुर श्रेणी** भी शामिल है जिसे **लुडुस** का नाम दिया गया है। किसी को पटाना, फुसलाना, सेक्शुअल मक़सद के लिए झूठ बोलना और मकसद पूरा हो जाने के बाद फटाफट अलग हो जाना इसी तरह के प्रेम से जुड़ी गतिविधियाँ हैं।

इन छः श्रेणियों के सूत्रीकरण से पहले आम तौर पर प्रेम को दो व्यापक श्रेणियों में बाँट कर देखा जाता था। इनमें पहली श्रेणी है रोमानी प्रेम की जिसकी ज़मीन भावपूर्ण, कामनाप्रधान और तर्कातीत होती है। एंद्रिक प्रेम और उन्मादी प्रेम दरअसल रोमानी प्रेम के तहत आते हैं। दूसरी है सहचर-उन्मुख प्रेम जो अधिक सचेत माना जाता है और जिसकी समझ अपेक्षाकृत समझ-बूझ कर अपना साथी चुनने के संदर्भ में बनती है। परोपकारोन्मुख प्रेम, मैत्रीपूर्ण प्रेम और परिणामवादी प्रेम इसी श्रेणी की सम्मिलित अभिव्यक्ति है। प्रेम के इस श्रेणी-विभाजन

का मतलब यह कतई नहीं है कि प्रेमी-प्रेमिका हमेशा-हमेशा के लिए एक ही श्रेणी के हो कर रह जाते हैं। उनकी भावनाएँ वक्त के साथ बदलती रह सकती हैं। मसलन, एक संबंध एंद्रिकता से शुरू हो कर मैत्रीपूर्ण या परोपकार-प्रधान प्रेम में विकसित हो सकता है। दूसरी तरफ एक व्यक्ति किन्हीं दो व्यक्तियों से अलग-अलग किस्म का प्रेम कर सकता है। एक के प्रति वह उन्मादी प्रेम में लिप्त हो सकता है, तो दूसरे के प्रति उसकी भावनाएँ परिणामवादी हो सकती हैं।

मनोविश्लेषण और संगमी प्रेम

प्रेम की समझ हासिल करने के मामले में मनोविश्लेषण ने समाज-विज्ञान की काफी मदद की है। मनोविज्ञान के महारथी कार्ल युंग और उनके साथियों की मान्यता है कि रोमानी प्रेम किसी व्यक्ति के प्रति अचानक पैदा हुए अचेत आकर्षण से उपजता है। युंग के मुताबिक इनसान की शख्सियत में एक अचेत हिस्सा होता है और एक जागरूक। आम तौर पर पुरुष के भीतर अचेत हिस्सा स्त्री-लिंग की और स्त्री के भीतर पुरुष-लिंग की नुमाइंदगी करता है। युंग की इस थियरी के मुताबिक व्यक्ति जब किसी के प्रति अचानक आकर्षण महसूस करता है तो वह अपनी ही चेतना के उस हिस्से से प्रेम कर रहा होता है जिसके बारे में उसे पता नहीं है और जो उसके भीतर मौजूद भिन्न जेंडर का प्रतिनिधित्व कर रहा है। युंग का यह भी कहना था कि व्यक्ति के इस अवचेतन की चालक-शक्ति अक्सर उसे जन्म देने वालों में से विपरीत लिंग से मिलती है। यानी पुरुष का यह अवचेतन उसकी माँ से प्रभावित होगा, और स्त्री का अवचेतन उसके पिता से। इसीलिए व्यक्ति अक्सर अपनी स्वैरकल्पना में अपने प्रेमी/प्रेमिका की वही छवि पालता है जो उसके अवचेतन में मौजूद होती है। हालाँकि युंग की यह थियरी सीधे-सीधे प्रमाणित नहीं की जा सकती, पर कई अनौपचारिक प्रेक्षणों में देखा गया है कि लोग ऐसे व्यक्तियों के प्रति आकर्षित होते हैं जो उनके माँ-बाप से मिलते-जुलते हों।

एंथनी गिडेंस ने उत्तर-आधुनिक युग के लिए रोमानी प्रेम के बरअक्स संगमी प्रेम की अवधारणा प्रतिपादित की है। गिडेंस कहते हैं कि रोमानी प्रेम लैंगिक लोकतंत्र की कसौटी पर खरा नहीं उतरता। स्त्री-पुरुष जब प्रेम में पड़ते हैं तो उस समय रोमानी प्रेम के तहत दोनों एक-दूसरे में समा जाना चाहते हैं। अपने साथी के लिए उन्हें अपने अहं का त्याग करने में भी कोई हिचक नहीं होती। उस समय ऐसा लगता है कि वे एक जन्म के नहीं बल्कि जन्म-जन्म के हमजोली हैं। लेकिन यह समतामूलक स्थिति तभी तक कायम रहती है जब तक प्रेम विवाह में नहीं बदलता। विवाह होते ही समाज द्वारा निर्धारित जेंडर-भूमिकाएँ हस्तक्षेप करती हैं और स्त्री-पुरुष के बीच की स्थापित तरतमता उस रिश्ते पर काबिज हो जाती है। इश्क़ का बुखार उतर जाता है और असलियत में स्त्री को अपना करियर, अपनी महत्त्वाकांक्षाएँ और अपनी पहचान तक पुरुष के लिए समर्पित करनी पड़ जाती है। गिडेंस का कहना है कि इन्हीं कमियों की वजह से नई सदी की स्त्रियाँ रोमानी प्रेम के बजाय संगमी प्रेम पर अधिक भरोसा करने की तरफ बढ़ रही हैं।

संगमी प्रेम (कॉनफ्लुएंट लव) के आधार में भी स्त्री और पुरुष की परस्पर पसंद मौजूद है, लेकिन प्रेम की यह समझौता वार्ता उन दो नदियों की तरह काम करती है जो साथ-साथ बहती हैं, एक खास मुकाम पर एक-दूसरे के साथ संगम करती हैं और फिर अपनी-अपनी शख्सियत पर कायम रहते हुए अपने-अपने रास्ते बहती चली जाती हैं। रोमानी प्रेम की तरह संगमी प्रेम दो शख्सियतों के एक-दूसरे में स्थायी रूप से समा जाने का नाम नहीं है। इसके तहत दोनों पक्ष अपना-अपना व्यक्तित्व और अहं कायम रखते हुए एक-दूसरे के लिए उतने ही खुलते हैं जितनी आवश्यकता होती है। सेल्फ डिस्क्लोज़िंग इंटीमेसी यानी स्व-घोषित अंतरंगता और समानता पर

आधारित संगमी प्रेम रोमानी के मुकाबले कहीं अधिक योजनाबद्ध, तर्कआधारित, लोकतांत्रिक, मैत्रीपूर्ण और परिणामवादी है। यह पुरुष और स्त्री को बराबर के मौके देता है, लेकिन रोमानी प्रेम के मुकाबले स्त्री को अधिक मौके देता है। गिडेंस ने संगमी प्रेम के तहत विकसित होने वाली सेक्शुअलिटी को प्लास्टिक करार दिया है। यहाँ प्लास्टिक से उनका मतलब कृत्रिम न हो कर सेक्शुअलिटी की परिवर्तनशील प्रकृति से है।

अंतरंगता का विमर्श : सेल्फ डिस्क्लोज़िंग इंटीमेसी

समाज-विज्ञान की दुनिया में प्रेम का दूसरा नाम अंतरंगता भी है। अंतरंगता व्यक्तियों के बीच घनिष्ठता से उपजती है। यह घनिष्ठता दो मित्रों के बीच हो सकती है, स्त्री-पुरुष के बीच होती है, माँ-बेटे और भाई-बहिन के बीच भी हो सकती है। घनिष्ठता की परिस्थितियाँ पैदा करने में पारिवारिक जीवन का बहुत बड़ा हाथ समझा जाता है। घरेलू दायरे में साथ-साथ समय गुज़ारने, बच्चे पैदा करने, उनका लालन-पालन करने और एक-दूसरे की देख-रेख करने से अनिवार्यत: व्यक्तिगत घनिष्ठता की ज़मीन तैयार होती है। लंबे समय के सह-जीवन के ज़रिए लोग शारीरिक और मानसिक रूप से एक-दूसरे का अंतरंग परिचय प्राप्त करते हैं। परिवार के अलावा सहजीवन संभव करने वाली स्कूल, कॉलेज, फौजी बैरकें और जेल जैसी जगहों पर भी व्यक्तियों के बीच घनिष्ठता घटित होने की संभावना रहती है। लेकिन समाज-विज्ञान में अंतरंगता का जो विमर्श प्रचलित है वह ज़्यादातर स्त्री-पुरुष के बीच घनिष्ठता का है। इस धरातल पर अक्सर अंतरंगता प्रेम का पर्याय बन जाती है। दूसरी तरफ आम तौर पर किसी व्यक्ति के साथ सेक्शुअल रिश्ता होने को अंतरंग संबंध का पर्याय मान लेना अंतरंगता की संकीर्ण समझ है। शारीरिक संबंध से एक-दूसरे के बारे में गहरे परिचय की संभावनाएँ खुलती हैं, लेकिन कोई ज़रूरी नहीं कि ऐसा हमेशा हो ही। नियमित यौन-संबंध रखने के बावजूद व्यक्तियों के बीच बहुत कम अंतरंगता पाई गई है। यहाँ तक विवाहित जीवन में भी अंतरंगता का अभाव होता है। एक ही कमरे में रहते हुए और एक ही बिस्तर पर सोने वाले व्यक्ति अलग-अलग दायरों में कैद रहते हैं। दूसरे, अंतरंगता की डिग्रियाँ भी हो सकती हैं। मसलन, एक व्यक्ति विभिन्न व्यक्तियों के साथ कम या ज़्यादा अंतरंग हो सकता है, और अंतरंगता एक बार स्थापित होने के बाद खत्म भी हो सकती है। परिवार से इतर सामाजिक संस्थाओं, जैसे कॉलेज वगैरह में बनने वाली अंतरंगता अपेक्षाकृत कम टिकाऊ होती है। अंतरंगता के प्रश्न पर ज़िग्मंट बाउमैन और एंथनी गिडेंस जैसे विद्वानों ने गहरा विचार-विमर्श किया है।

चूँकि व्यक्तिगत जीवन में अंतरंगता विविध मुकामों पर विभिन्न मात्रा में (सघन या विरल) अलग-अलग तात्पर्यों के साथ उपजती है, इसलिए उसके सामाजिक प्रभावों को लेकर विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ चिंतकों का विचार है कि दैनंदिन जीवन में अंतरंगता की व्यक्तिगत दावेदारियों ने नागरिक और सामुदायिक एकजुटता और सक्रियता के पहलुओं पर विपरीत प्रभाव डाला है। ये विद्वान मानते हैं कि अंतरंगता के व्यक्तिगत रूपों ने पारिवारिक मूल्यों की उपेक्षा को बढ़ावा दिया है। लेकिन कुछ दूसरे विद्वान विपरीत निष्कर्षों पर पहुँचे हैं। उनके अनुसार अंतरंगता व्यक्तिगत रिश्तों में जिस समानता और लोकतांत्रिक प्रकृति को बढ़ावा देती है, उसके कारण समाज के दूसरे दायरों में भी समानता और लोकतंत्र की संरचनाएँ मज़बूत होती हैं।

समाज-वैज्ञानिक विमर्श ने अंतरंगता की जिस किस्म को सर्वाधिक प्रमुखता दी है, वह है एक खास तरह की घनिष्ठता जिसके तहत एक व्यक्ति अपने पसंदीदा इनसान के सामने अपने मन के भेद खोल देता है। इसे सेल्फ डिस्क्लोज़िग इंटीमेसी की संज्ञा दी गई है। जाहिर है कि इस अंतरंगता में दैहिक परिचय का महत्त्व है, पर एक-दूसरे को भीतर से समझने की प्रक्रिया को अधिक रेखांकित किया गया है। मानवीय रिश्तों के अध्येताओं,

संबधवाचक सलाह-मश्विरा देने वालों, मनोविश्लेषकों, मनश्चिकित्सकों और यौन समस्याओं का हल सुझाने वालों ने अंतरंगता के इस रूप को काफी विज्ञापित और प्रचारित किया है। इसके तहत पहले यह बताया जाता है कि व्यक्ति को अपने खुद के मनोभावों का पूरा एहसास होना चाहिए। इसके लिए ज़रूरी है कि वह अपने बारे में सुने और बातें करे। अपने ख्यालों का दूसरों के साथ साझा करते हुए अपने जज़्बात का खुलासा करे ताकि एक बेहतर संबंध कायम किया जा सके या टिकाया जा सके। परस्पर स्नेह और देखभाल करने से उपजने वाली व्यवहारगत अंतरंगता के मुकाबले सेल्फ डिस्क्लोज़िंग इंटीमेसी में दूसरे को अपने मन में झाँकने की इज़ाज़त देने या लेने को काफी महत्त्व दिया गया है। ऐसी अंतरंगता के लिए संवाद स्थापित करना अति-आवश्यक है। इसमें सेक्शुअल अंतरंगता भी अहम भूमिका अदा कर सकती है, लेकिन यह कोई आवश्यक या पर्याप्त शर्त नहीं मानी जाती। मानस के धरातल पर अंतरंगता बिना दैहिक अंतरंगता के उपलब्ध करना कठिन नहीं समझा जाता। दूसरी तरफ सेक्शुअलिटी के सिद्धांतकारों की मान्यता है कि अगर सेक्शुअलिटी व्यक्ति की इयत्ता का सार है तो फिर सेक्शुअल रिश्ते के ज़रिए उस अंतरंगता को और सघन किया जा सकता है जो संवाद के माध्यम से विकसित की गई है।

आत्मीय और गहन संवाद के ज़रिए प्राप्त की गई अंतरंगता के तात्पर्यों की परस्पर विपरीत व्याख्याएँ की गई हैं। एंथनी गिडेंस ने १९९२ में प्रकाशित अपनी रचना *दि ट्रांसफर्मेशन ऑव इंटीमेसी* में इसके सकारात्मक और स्वागतयोग्य पहलुओं को उकेरा है। गिडेंस की मान्यता है कि बीसवीं सदी के आखिरी दौर में अंतरंगता के आधुनिक रूपों में काफी तब्दीली आई है। यही वह समय था जब सामाजिक परिवर्तन की तेज़ रफ्तार, जीवन की अनिश्चितता और उसमें निहित जोखिम के एहसास ने लोगों को समझाया कि अब पहले की तरह पारिवारिक जीवन जीने या सेक्शुअल या जेंडर अस्मिताओं के सहारे रहने से काम नहीं चलने वाला है। अब उन्हें अपनी इयत्ता का कहीं अधिक आत्मसचेत आख्यान गढ़ना होगा। इस प्रवृत्ति के कारण लोग सेल्फ डिस्क्लोज़िंग इंटीमेसी की तरफ और अधिक झुके जिससे उन्हें एक या उससे अधिक सघन निजी संबंधों के दायरे में अपनी जगह तय करने में मदद मिली। यह एक ऐसा समय था जब रिश्तों का बंधन पहले के मुकाबले कहीं कमज़ोर होता जा रहा था। संबंध जल्दी-जल्दी टूट रहे थे। परस्पर संतोष उनकी पहली और अंतिम शर्त बन गई थी। दूसरी तरफ संबंधों की प्रकृति अधिक लोकतांत्रिक और समतामूलक होती जा रही थी। इसी तरह सेक्स की प्रकृति भी बदल रही थी। वह परम्पराओं और वर्जनाओं के खाने से निकल कर पहले के मुकाबले कहीं तरल हो गया था। स्त्री-पुरुषों के लिए यौनाचरण का मतलब था वह कार्रवाई जिसमें उन्हें आनंद आए, भले ही उसे दूसरे कुछ भी समझते हों। गिडेंस का विमर्श मानता है कि अभी भी दीर्घकालीन रिश्तों के लिहाज से वैवाहिक संबंध ही सर्वाधिक प्रचलित हैं और माता-पिता के रूप में बच्चों के लालन-पालन के पूर्व प्रचलित रूप ही चलते हैं, पर परिवार और सहजीवन के अन्य रूप भी धीरे-धीरे परवान चढ़ रहे हैं।

अंतरंगता के विमर्श में लैंगिक आयामों पर विशेष ध्यान दिया गया है। मनोवैज्ञानिक और मनोवैश्लेषिक अनुसंधानों से पता चला है कि माँ की भूमिका निभाने के दौरान माँ और बच्चे के बीच बनने वाला संबंध स्त्री को अंतरंगता के लिहाज से अधिक टिकाऊ पार्टनर बनाने की तरफ ले जाता है। निजी रिश्तों को तोड़ने और किसी न किसी प्रकार चलाते रहने की प्रवृत्ति स्त्री में अधिक पाई जाती है। लिंग आधारित सांस्कृतिक विमर्श, सामाजिक मर्यादाएँ, वर्जनाएँ और अवसरों की उपलब्धता के आयाम भी स्त्री को टिकाऊ अंतरंगता का पैरोकार बनाते हैं। गिडेंस का कहना है कि अंतरंगता की संरचनाओं में हुई हालिया तब्दीली की कमान ज़्यादातर स्त्रियों ने ही सँभाली हुई है। जो स्त्रियाँ पहले टिकाऊ अंतरंगता की तलाश में आत्मत्याग करने के लिए तैयार रहती थीं,

वे अब अंतरंगता की अधिक समतामूलक और लोकतांत्रिक ज़मीन तलाश रही हैं। स्त्रियों में भी समलैंगिक स्त्रियाँ और युवतियों ने इस क्षेत्र में विशेष रूप से पहल की है। गिडेंस की इस स्थापना पर नारीवादियों के बीच बहस है। कुछ नारीवादी विद्वानों का तर्क है कि अंतरंगता में रूपांतरण की बागडोर स्त्रियों को थमाते वक्त गिडेंस समाज में व्याप्त लैंगिक भेदभाव और ऊँच-नीच को कम करके आँकते हैं। साथ ही वे इतरलैंगिक सेक्शुअल संस्कृति के प्रचलन को भी काफी-कुछनज़रअंदाज़ कर देते हैं। लेकिन, कुछ नारीवादी विद्वान गिडेंस से सहमत भी नज़र आते हैं। उनका कहना है कि इतरलैंगिक मानकों से परे जा कर अंतरंग संबंध बनाने की परिघटना ने अपने कदम बढ़ाने शुरू कर दिए हैं।

गिडेंस के विपरीत कुछ अकादमीशियनों का तर्क है कि इस 'उत्तर-आधुनिक' ज़माने में या तो अंतरंगता की सघनता का क्षय हो गया है, या फिर उसकी सघनता समाज के ज़्यादा काम की नहीं रह गई है। बेरोकटोक बाज़ारीकरण, उपभोक्ता संस्कृति और चमक-दमक की प्रतियोगिता ने लोगों को आत्मलीन और परायेपन का शिकार बना दिया है। अपने जीवन में अकेले पड़ते लोग अंतरंग रिश्तों के काबिल ही नहीं रह गए हैं। निष्ठावान और ज़िम्मेदार होने का विमर्श घट कर अपने प्रति ज़िम्मेदारी और अपने प्रति निष्ठा में सिमट कर रह गया है। अंतरंगता की निराशाजनक तस्वीर खींचने वाले विद्वानों में बाउमैन और होश्चाइल्ड प्रमुख हैं।

संदर्भ

१. सूज़न एस. हेंड्रिक और क्लायड हेंड्रिक, *रोमांटिक लव,* सेज, न्यूबरी पार्क, कैलिफ, १९९२

२. जे.ए. ली, क*लर्स ऑव लव : एन एक्सप्लोरेशन ऑव वे ऑव लविंग,* न्यू प्रेस, डॉन मिल्स, ओंटारियो, १९७७

३. जे.ए. ली, 'लव स्टायल्स', रॉबर्ट जे. स्टेनबर्ग और एम.एल.बार्न्स (सम्पा.), *दि साइकोलॅजी ऑव लव,* येल यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू हैविन, कनेक्टीकट, १९८८

४. रॉबर्ट जे. स्टेनबर्ग, *क्यूपिड्स एरो : दि कोर्स ऑव लव थ्रू टाइम्स,* कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज और न्यूयॉर्क, १९९८

५. एंथनी गिडेंस, *दि ट्रांसफर्मेशन ऑव इंटीमेसी,* पॉलिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, १९९२

६. ज़िग्मंट बाउमैन, *लिक्विड लव :ऑन दि फ्रेलिटी ऑव ह्यूमन बोंड,* पॉलिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, २००३

७. ए. होश्चाइल्ड, *दि कमर्शियलाइज़ेशन ऑव इंटीमेट लाइफ : नोट्स फ्रॉम होम एंड वर्क,* यूनिवर्सिटी ऑव कैलिफोर्निया प्रेस, बर्कले, २००३

८. एल. जेमीसन, 'इंटीमेसी ट्रांसफॉर्म्ड :ए क्रिटिकल लुक एट दि प्यौर रिलेशनशिप', *सोशियोलॅजी* ३३: ४७७ ९४

९. मीना खंडेलवाल, 'अरेंजिंग लव : इंटेरोगेटिंग दि वैंटेज पाइंट इन दि क्रॉस बॉर्डर फेमिनिज़म', *साइन्स,* खंड ३४, अंक ३, पृष्ठ ५८३-६०९

१०. मार्गरीटा ल केज़, 'लव, दैट इंडिस्पेंसेबिल सप्लीमेंट : इरिगरे एंड कांट ऑन लव एंड रिस्पेक्ट', *हायपैटिया,* खंड २०, अंक ३, पृष्ठ ९२-११४